दृष्टा और दर्शन शक्ति को एक समझना अस्मिता है।

सुख के प्रति आसक्ति राग है।

दुःख के प्रति घृणा द्वेष है।

अपना हित चिन्तन करना सब में समान है तथा अहित से भय भी सब में समान है। यही अभिनिवेश है।

ये अविद्यादि पांच क्लेश हैं।

२७. प्रश्नः–ये अविद्यादि दोष किस प्रकार नष्ट होते हैं ?

उत्तरः–ते प्रति प्रसव हेयाः सूक्ष्माः ॥ यो०द०, २।१०॥

सूक्ष्म अवस्था को प्राप्त ये दोष चित्त को अपने कारण में विलीन करने के द्वारा नष्ट करने के योग्य हैं।

ध्यान हेयास्तद् वृत्तयः ॥ यो० द०, २।११॥

उन क्लेशों की वृत्तियां ध्यान के द्वारा नाश करने योग्य हैं।

२८. प्रश्नः–क्या इन क्लेशों का फल इसी जन्म में भुक्त हो जाता है ?

उत्तरः–क्लेशमूलः कर्माशयोदृष्टादृष्ट जन्म वेदनीयः ॥ (यो० द०, २।१२)

क्लेशमूलक कर्माशय (कर्मफल) वर्तमान जन्म तथा भावी जन्म दोनों में ही भोगा जाता है।

२६. प्रश्नः–क्लेशों का मूल विद्यमान रहने पर क्या परिणाम होता है ?

उत्तरः–क्लेशों के मूल के विद्यमान रहने तक, पुनर्जन्म (जाति), आयु और भोग होता रहता है।

३०. प्रश्नः–इन जाति आयु और भोग का परिणाम क्या है ?

उत्तरः–ये जाति आयु, और भोग, आह्लाद (प्रसन्नता) तथा परिताप (दुःख) उत्पन्न करने वाले हैं तथा परिणाम दुःख, ताप दुःख, एवम् संस्कार दुःख गुणों की वृत्तियों की भिन्नता के कारण समस्त विवेकियों के लिये दुःख रूप हैं।

३१. प्रश्नः–यह दृश्य किसलिए है ?

उत्तरः–यह प्रकाश, क्रिया और स्थिति स्वभाव वाला पञ्चभूत तथा इन्द्रियों का समूह अभ्युदय (भोग परक उन्नति) एवम् अपवर्ग (मोक्ष) के प्राप्त्यर्थ है।

३२. प्रश्नः–कैवल्य क्या है ?

उत्तरः–अः–अविद्या के अभाव से हान का होना अर्थात् पुनर्जन्मादि दुःखों का अभाव हो जाना ही

कैवल्य है ।

आः–बुद्धि (अन्तःकरण) तथा पुरुष की शुद्ध तथा साम्यावस्था ही कैवल्य (मोक्ष) है ।

इः–पुरुषार्थ की समाप्ति तथा गुणों की प्रति प्रसव अवस्था (गुणों की प्राप्ति में पुरुषार्थ शून्यता कैवल्य है अर्थात् पुरुष की अपने स्वरूप में प्रतिष्ठा कैवल्य (मोक्ष) है ।

३३. प्रश्नः--आविवेक ख्याति क्या है ?

उत्तरः–योग के अङ्गों के अनुष्ठान से अशुद्धिक्षीण होकर, ज्ञान का प्रकाश होना आविवेक ख्याति है ।

३४. प्रश्नः–योग के कितने अङ्ग हैं ?

उत्तरः–योग के आठ अङ्ग हैं। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि ।

३५. प्रश्नः–यम कितने हैं और उनसे क्या-क्या लाभ हैं ?

उत्तरः–यम पांच हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह ।

ये यम देश तथा काल से अवछिन्न (बन्धन रहित) रूप में पालन किये जाने वाले सार्वभौम महाव्रत हैं ।

समस्त प्राणियों के प्रति वैर भावना से रहित होना अहिंसा है । अहिंसा की प्रतिष्ठा से उसके समीप का वातावरण वैर भावना से रहित हो जाता है ।

वाणी द्वारा यथार्थ कथन ही सत्य है । वाणी में सत्य के प्रतिष्ठित होने पर क्रिया सफल होती है ।

पराये पदार्थों का न लेना ही अस्तेय है । अस्तेय की प्रतिष्ठा से समस्त रत्नों की प्राप्ति होती है ।

गुप्तेन्द्रिय के निरोध पूर्वक वीर्य की रक्षा करना ब्रह्मचर्य है । ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा से वीर्य तथा बल का लाभ होता है ।

विषयों के प्रति दोष दृष्टि पूर्वक विषयों के सहायक पदार्थों में अनासक्ति तथा असंग्रह, अपरिग्रह है । अपरिग्रह की स्थिरता से जन्म के कारणों का बोध होता है ।

३६. प्रश्नः–नियम कितने हैं, तथा उनके पालन करने का क्या फल है ?

उत्तरः–नियम पांच हैं। शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वर प्रणिधान।

बाह्य (जलादि) साधनों द्वारा शारीरिक शुद्धि तथा सत्सङ्गादि साधनों द्वारा अन्तःकरण की शुद्धि शौच है। शौच के पालन करने से अपने अङ्गों के प्रति उपरति (वैराग्य या उपरामता) तथा अन्यों से संसर्ग न करने की इच्छा उत्पन्न होती है। अन्तःकरण की शुद्धि होकर, मानसिक प्रसन्नता, चित्त व इन्द्रियों पर अधिकार तथा आत्म दर्शन की योग्यता उत्पन्न होती है।

उचित पुरुषार्थ एवम् साधनों द्वारा प्राप्त के अतिरिक्त अधिक की इच्छा न करना सन्तोष है। सन्तोष से सर्वोत्तम सुख प्राप्त होता है।

द्वन्द्वों (सर्दी-गरमी सुख-दुःख तथा भूख-प्यास) का सहन करना तप है। तप से शरीर तथा इन्द्रियों की अशुद्धि दूर होकर, शरीर एवम् इन्द्रियादि की सिद्धि होती है।

मोक्ष विषयक वेदादि ग्रन्थों का अध्ययन स्वाध्याय है। स्वाध्याय से विषय का

ज्ञान होकर अभीष्ट प्राप्त होता है।

ओम् (प्रणव) के अर्थ रूप ईश्वर के प्रति निष्ठापूर्वक ओम् का जप तथा चिन्तन करना ईश्वर प्रणिधान है। ईश्वर प्रणिधान से समाधि सिद्ध होती है।

३७. प्रश्नः–आसन किसे कहते हैं?

उत्तरः–जिस अवस्था में स्थिरता एवम् सुख प्राप्त होता है, उस अवस्था का नाम आसन है। निश्चल होकर सुखपूर्वक बैठने का नाम आसन है।

३८. प्रश्नः–आसन का क्या फल है?

उत्तरः–आसन से स्थिरता व सुख प्राप्त होता है। तथा द्वन्द्वों (शीत-उष्ण, भूख-प्यास, सुख तथा दुःख) से आघात नहीं लगता है।

३९. प्रश्नः–आसन कैसे सिद्ध होता है?

उत्तरः–प्रयत्न की शिथिलता तथा अनन्त परमात्मा में चित्त लगाने से आसन सिद्ध होता है।

४०. प्रश्नः–विभिन्न प्रकार के आसनों का योग में क्या स्थान है? तथा उनसे क्या लाभ हैं?

उत्तरः–विभिन्न प्रकार के आसनों का योग से कोई सम्बन्ध नहीं है। विभिन्न प्रकार के आसन एक प्रकार का व्यायाम हैं; जिनसे शरीर रोग रहित

होकर लचकीला तथा दृढ़ हो जाता है। शरीरस्थ जीवन-शक्ति बढ़ जाती है।

४१. प्रश्नः–प्राणायाम क्या है ?

उत्तरः–तस्मिन्सति श्वास प्रश्वासयोर्गति विच्छेदः प्राणायामः ॥ यो० द०, २।४९॥

आसन पर सुखपूर्वक स्थिर बैठने की स्थिति प्राप्त होने के पश्चात् श्वास (प्राणवायु को अन्दर लेने) और प्रश्वास (प्राणवायु को बाहर निकालने) की गति का विच्छेद ही प्राणायाम है। प्राणायाम परम तप है।

४२. प्रश्नः–प्राणायाम कितने प्रकार का है ?

उत्तरः–"पतञ्जलि मुनि" कृत योग दर्शन के अनुसार प्राणायाम चार प्रकार का है।

१. बाह्य प्राणायाम, २. आभ्यन्तर प्राणायाम, ३. स्तम्भवृत्ति प्राणायाम, ४. बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम।

बाह्य प्राणायाम, आभ्यन्तर प्राणायाम तथा स्तम्भवृत्ति प्राणायाम, देश, काल तथा संख्या की दृष्टि से दीर्घ और सूक्ष्म होते हुए देखे जाते हैं।

४३. प्रश्नः–बाह्य प्राणायाम की विधि क्या है तथा बाह्य प्राणायाम करने से क्या लाभ हैं ?

उत्तरः–श्वास को बलपूर्वक बाहर निकालकर यथाशक्ति बाहर रोकना बाह्य प्राणायाम है। इससे निम्नलिखित लाभ हैं।

१. रक्त शुद्धि, २. नाड़ी शुद्धि, ३. वीर्य की स्थिरता, ४. चित्त की एकाग्रता, ५. स्मरण शक्ति की वृद्धि, ६. प्राणों पर अधिकार तथा प्राण संयमन क्रिया की सिद्धि।

४४. प्रश्नः–आभ्यन्तर प्राणायाम की विधि क्या है तथा आभ्यन्तर प्राणायाम करने से क्या लाभ हैं ?

उत्तरः–श्वास अन्दर लेकर यथाशक्ति अन्दर रोकना आभ्यन्तर प्राणायाम है। आभ्यन्तर प्राणायाम से बल की वृद्धि, वीर्य्य की स्थिरता तथा पश्चिम मार्ग द्वारा प्राण संरोहण की सिद्धि आदि लाभ होते हैं।

४५. प्रश्नः–स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की विधि क्या है, तथा स्तम्भवृत्ति प्राणायाम से क्या लाभ हैं ?

उत्तरः–अन्दर जाते हुए श्वास अथवा बाहर निकलते हुए प्रश्वास को यथाशक्ति वहीं रोके रखना स्तम्भवृत्ति प्राणायाम है। वीर्य की पूर्ण स्थिरता चित्त की निरुद्ध अवस्था तथा स्थित प्रज्ञ अवस्था

स्तम्भवृत्ति प्राणायाम से प्राप्त होती है।

४६. प्रश्नः–बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम की विधि क्या है तथा बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम से क्या लाभ हैं ?

उत्तरः–बाह्य, आभ्यन्तर तथा स्तम्भवृत्ति प्राणायामों के सिद्ध होने के फलस्वरूप बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम स्वतः ही सिद्ध हो जाता है।

बाह्य, आभ्यन्तर तथा स्तम्भवृत्ति प्राणायामों के सिद्ध होने पर, अधोभाग स्थित अपान ऊर्ध्वगति वाला हो जाता है। अपान का ऊपर की ओर तथा प्राण का नीचे की ओर समान रूप से आक्षेपण अर्थात् फैंकना ही चौथा प्राणायाम है।

बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम से प्राण पूर्व मार्ग द्वारा ऊर्ध्वगति को प्राप्त होता है तथा पूर्वमार्ग से समाधि सम्पन्न होती है।

४७. प्रश्नः–क्या योगदर्शन द्वारा प्रतिपादित प्राणायाम सर्वथा हानि रहित हैं ?

उत्तरः–योग दर्शन द्वारा प्रतिपादित यह चारों प्राणायाम सर्वथा हानि रहित, अल्प श्रम साध्य तथा अत्यधिक लाभप्रद हैं।

४८. प्रश्नः–क्या इन चार प्राणायामों के अतिरिक्त और भी प्राणायाम हैं ?

उत्तरः–योग दर्शन के अतिरिक्त योग विषयक नव्यग्रन्थों में नाना प्रकार के सैकड़ों प्राणायामों का वर्णन है। जिनको अत्यधिक सावधानीपूर्वक अधिक समय तक करने पर अत्यल्प सफलता मिलती है परन्तु रोगी हो जाने की सम्भावना अधिकांशतः बनी रहती है।

४९. प्रश्नः–प्राणायाम करने की विधि क्या है ?

उत्तरः–पवित्र एवम् एकान्त स्थान में, शान्त समय में खाली पेट सुकोमल आसन पर सुखासन (अथवा अभीष्ट आसन) से मेरुदण्ड को सीधा रखते हुए बैठकर प्रथम दिन १० बाह्य प्राणायाम प्रातः तथा १० बाह्य प्राणायाम सायं करे। इस प्रकार कुछ काल में क्रमशः शनैः-शनैः २१ संख्या तक बढ़ाकर प्रातः तथा सायं प्रतिदिन किया करे। यह सामान्य जनों के लिए है।

अधिक निष्ठावान अभ्यासी इसी भांति क्रमशः शनैः-शनैः बढ़ाता हुआ १०० बाह्य प्राणायाम प्रातःकाल तथा १०० बाह्य प्राणायाम सायंकाल प्रतिदिन किया करे।

इसी भांति पूर्वोक्त विधि से आसन पर स्थित हो पांच आभ्यन्तर प्राणायाम प्रातःकाल तथा ५ आभ्यन्तर प्राणायाम सायंकाल प्रथम दिन करे। शनैः-शनैः क्रमशः बढ़ाता हुआ २१ आभ्यन्तर प्राणायाम प्रातःकाल तथा २१ आभ्यन्तर प्राणायाम सायंकाल प्रतिदिन किया करे।

अधिक निष्ठावान अभ्यासी कालान्तर में क्रमशः बढ़ाता हुआ १०० आभ्यन्तर प्राणायाम प्रातःकाल तथा १०० आभ्यन्तर प्राणायाम सायंकाल प्रतिदिन किया करे।

इसी भांति पूर्वोक्त विधिपूर्वक आसन पर स्थित हो दश स्तम्भवृत्ति प्राणायाम प्रातःकाल तथा दश स्तम्भवृत्ति प्राणायाम सायकाल प्रथम दिन करे। कालान्तर में शनैः शनैः क्रमशः बढ़ाता हुआ २१ स्तम्भवृत्ति प्राणायाम प्रातःकाल तथा २१ स्तम्भवृत्ति प्राणायाम सायंकाल प्रतिदिन किया करे।

अधिक निष्ठावान अभ्यासी कालान्तर में शनैः-शनैः क्रमशः बढ़ाता हुआ १०० स्तम्भवृत्ति प्राणायाम प्रातःकाल तथा १०० स्तम्भवृत्ति प्राणायाम सायंकाल प्रतिदिन किया करे।

बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम, उपरोक्त तीनों प्राणायामों के सिद्ध होने पर स्वतः ही सम्पन्न हो जाता है।

५०. प्रश्नः—क्या प्राणायाम करते समय, मूलबन्ध, उड्डियाण बन्ध तथा जालन्धर बन्ध लगाने चाहिए ?

उत्तरः—योग विषक नव्यग्रन्थों में प्राणायाम करते समय, मूलबन्ध, उड्डियाण बन्ध तथा जालन्धर बन्ध लगाने का विधान है। योग दर्शन में इन बन्ध तथा मुद्राओं का कोई वर्णन नहीं है।

बाह्य प्राणायाम करते समय मूलेन्द्रिय (गुदा) ऊपर की ओर स्वतः ही खिच जाती है। बाहर श्वास निकालते हुए मूलाकर्षण स्वतः ही हो जाता है।

बन्ध और मुद्राओं युक्त यह अशास्त्रीय प्रणाली, रोगोत्पादक तथा भ्रष्ट होने के कारण सर्वथा त्याज्य है।

५१. प्रश्नः–प्राणायाम करने के लिए आयु तथा आहार विषयक क्या विवेचन है ?

उत्तरः–प्राणायाम करने के लिये स्वस्थ एवम् समर्थ शरीर आवश्यक है। आयु का कोई बन्धन नहीं है।

प्राणायाम करने वाले व्यक्ति का आहार पवित्र एवम् सात्विक होना चाहिए। तीक्ष्ण, रूक्ष विदाही तथा दुर्गन्धिकारक पदार्थों का सेवन कदापि नहीं करना चाहिए। घी दूध का विशेष सेवन करने विषयक आग्रह भी भ्रमपूर्ण है। प्राणायाम करने वाले अभ्यासी का पोषण प्राण स्वतः ही करता है।

५२. प्रश्नः–प्राणायाम करने का क्या फल है ?

उत्तरः–प्राणायाम करने के निम्नलिखित फल हैं।

१. शरीर निरोगी हो जाता है।
२. इन्द्रियां तथा अन्तःकरण शुद्ध तथा सिद्ध हो जाते हैं।
३. प्राणों पर अधिकार हो जाता है।
४. प्राण संयमन सिद्ध हो जाता है।
५. बुद्धि के प्रकाश का आवरण क्षीण हो जाता है।

६. मन में धारणा की योग्यता हो जाती है।
७. इन्द्रियाँ अपने विषयों से उपराम होकर चित्त वृत्ति के अनुरूप वृत्ति वाली हो जाती हैं।
८. मन विकारों से रहित हो जाता है।
९. प्रत्याहार सम्पन्न होकर विभूतिपाद में प्रवेश हो जाता है।
१०. इन्द्रियों व अन्तःकरण की परम वशीकार स्थिति सम्पन्न हो जाती है।

५३. प्रश्नः–क्या प्राण संयमन क्रिया (प्राण चढ़ाना) प्राणायाम से भिन्न क्रिया है तथा प्राण संयमन क्रिया की विधि क्या है ?

उत्तरः-प्राण संयमन क्रिया (प्राण चढ़ाना) प्राणायाम से सर्वथा भिन्न क्रिया है। इसका योगदर्शन की चतुर्थ, बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम से सम्बन्ध है। इसके दो भेद हैं।

अः–पूर्व मार्ग द्वारा प्राण संयमन।

आः–पश्चिम मार्ग द्वारा प्राण संयमन।

पूर्व मार्ग द्वारा प्राण संयमनः–प्रतिदिन १ घटिका पर्यन्त बाह्य प्राणायाम का अभ्यास करने पर

एक मास में अपान मूलस्थान से ऊपर उठने लगता है। उस समय मूलाकुञ्चन निरन्तर रहना चाहिए। अपान ऊपर उठकर नाभिस्थ समान में लय हो जाता है। उत्तरोत्तर समान हृदयस्थ प्राण में तथा हृदयस्थ प्राण कण्ठस्थ उदान में विलीन होकर मूर्द्धा प्रदेश में प्रवेश कर जाता है। उस समय समस्त शरीर चेतना रहित हो जाता है। इसकी स्थूल प्राण (स्थूल कुण्डलिनी) समाधि संज्ञा है। इस समय शोक रहित अवस्था होती है।

पश्चिम मार्ग द्वारा प्राण संयमन :—प्रतिदिन १ घटिका पर्यन्त आभ्यन्तर प्राणायाम का अभ्यास करने पर एक मास में पश्चिम मार्ग (मेरुदण्डस्थ मार्ग) से प्राण शनैः-शनैः ऊपर की ओर चढ़ने लगता है। उस समय ध्यान की अवस्था अत्यन्त प्रकाशपूर्ण हो जाती है। निरन्तर अभ्यास करने पर कालान्तर में प्राणों की गति पर सहज अधिकार हो जाता है। शरीर भी अत्यन्त हल्का होकर अधर में स्थित हो जाता

है। इसकी सूक्ष्म प्राण (सूक्ष्म कुण्डलिनी) समाधि संज्ञा है।

५४. प्रश्नः—क्या रेचक, पूरक तथा कुम्भक भी प्राणायाम हैं ?

उत्तरः—योग दर्शन के मतानुसार रेचक, पूरक तथा कुम्भक कोई प्राणायाम नहीं है। योग विषयक नव्य ग्रन्थकारों ने रेचक, पूरक तथा कुम्भक शब्दों का प्रयोग किया है।

५५. प्रश्नः—क्या कुण्डलिनी शक्ति है तथा क्या इसका जागरण भी होता है ?

उत्तरः—वस्तुतः कुण्डलिनी शक्ति विषयक प्रश्न, योग क्षेत्र का व्यापक प्रश्न है। योग दर्शन का साधनपाद अधिकांशतः प्राणायाम पर आधारित है। शारीरिक प्रक्रियाओं का मूल आश्रय प्राण है। प्राण तथा विद्युत शक्ति समस्त शरीर में व्यापक है। यह दोनों सर्प के समान गति वाली हैं। इसलिये योग विषयक नव्य ग्रन्थकारों ने प्राण को स्थूल कुण्डलिनी तथा विद्युत को सूक्ष्म कुण्डलिनी नामक विस्मयकारक सांकेतिक संज्ञा प्रदान की है।

बाह्य प्राणायाम के प्रबल अभ्यास से स्थूल प्राणों का संयमन तथा आभ्यन्तर प्राणायाम के प्रबल अभ्यास से सूक्ष्म प्राणों का संयमन सिद्ध होता है। प्राणों पर अधिकार सम्पन्न होने की अवस्था की ही "कुण्डलिनी जागरण" संज्ञा है।

× × × ×

५६. प्रश्नः–धारणा क्या है ?

उत्तरः–देश बन्ध चित्तस्य धारणा (यो०द०, ३।१)

चित्त का एक देश में निरुद्ध होना धारणा है।

५७. प्रश्नः–धारणा के प्रमुख स्थान कौन-कौन से हैं ?

उत्तरः–हृदय प्रदेश, नासिकाग्र, भ्रूमध्य तथा मूर्द्धा में से किसी एक स्थान पर चित्त एकाग्र (धारणा) करना चाहिए।

धारणा से विभूतिपाद आरम्भ होता है। प्राणायाम जन्य प्राण जयरूपी प्राण संयमन धारणा से आरम्भ होता है।

५८. प्रश्नः–क्या धारणा के अन्य प्रकार भी हैं ?

उत्तरः–योग विषयक नव्य ग्रन्थकारों ने धारणा की अनेकों विधियां प्रस्तुत की हैं। परन्तु वे सभी विधियां भ्रान्त मतों पर आधारित भ्रामक विधियां हैं, जो स्वास्थ्य के लिये भी हानिकारक हैं। अतः सर्वथा त्याज्य हैं।

५९. प्रश्नः–ध्यान क्या है ?

उत्तरः–तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ॥यो०द०, ३।२॥

जिस देश में धारणा की है वहां ही निरन्तर एकतानता (चित्त की स्थिरता) बने रहना ध्यान है।

६०. प्रश्न:–क्या शरीर में षट्चक्र अथवा अष्टचक्र हैं ?

उत्तर:–शरीर विज्ञान के अनुसार शरीर में विभिन्न स्थानों पर नाड़ी गुच्छक हैं। परन्तु योगविषयक नव्यग्रन्थों में वर्णित षटचक्रों से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

योग विषयक नव्य ग्रन्थकारों ने अपने ग्रन्थों में षटचक्रों का अतिशयोक्ति पूर्ण, काल्पनिक एवम् भ्रामक वर्णन किया है। इसी भ्रामक पूर्वाग्रह के आधार पर पूर्वाग्रह ग्रस्त व्यक्तियों ने अथर्ववेद के इस मन्त्र:–

अष्टाचक्रा नव द्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्यय:कोश: स्वर्गो ज्योतिषावृत: ॥
(अथर्ववेद, १०।२।३१)

के आधार पर शरीर में आठ चक्रों की भ्रामक कल्पना की है।

× × ×

६१. प्रश्न:–अथर्ववेद के "अष्टाचक्रा नवद्वारा" मंत्र का देवता क्या है तथा इस मंत्र का अर्थ क्या है ?

उत्तर:–अथर्ववेद के "अष्टाचक्रा नवद्वारा" मन्त्र का देवता (विषय) ब्रह्म प्रकाशनम् है। ब्रह्म प्रकाशनम का अर्थ प्रकृति का वर्णन है।

मन्त्र का अर्थ निम्नलिखित है।

अष्टा चक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ॥
तस्यां हिरण्यय: कोश: स्वर्गो ज्योतिषावृत: ॥
(अथर्ववेद, १०।२।३१)

अर्थ:–पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सत, रज तथा तम रूपी आठ चक्रों तथा कान, आंख, नाक, मुख, उपस्थ तथा गुदा इन नौ द्वारों से युक्त यह अविजित शरीर इन्द्रियों (देवताओं) का आश्रय है। इसमें दीप्तिमान कोष (आनन्द मय कोष) आनन्दमय प्रकाश से परिपूर्ण है।

६२. प्रश्न:–समाधि क्या है ?

उत्तर:–"तदेवा मात्र निर्भासं स्वरूप शून्यमिव समाधि: ॥
(यो० द०,३।३)

जब केवल ध्येय मात्र रह जाय तथा ध्याता को अपना स्वरूप विस्मृत हो जाय उस अवस्था का नाम समाधि है।

जिस देश में धारणा की निरन्तर स्थिरता से ध्यान सम्पादित हुआ हो, उसी देश में चित्त की निरुद्ध अवस्था में आत्म विस्मृति पूर्ण अवस्था समाधि है।

६३. प्रश्नः–क्या समाधि अवस्था में अभीष्ट विषय का साक्षात्कार होता है ?

उत्तरः–ज्योतिष्मती प्रवृत्ति का उदय होने पर योगी समाधि अवस्था में अभीष्ट विषय का साक्षात्कार करता है।

६४. प्रश्नः–संयम क्या है ?

उत्तरः–त्रयमेकत्र संयमः ॥ यो० द०, ३।४॥

किसी भी देश (अथवा विषय) में धारणा, ध्यान, तथा समाधि का एक साथ प्रयोग संयम है। संयम उपासना का नौवां अङ्ग है।

६५. प्रश्नः–संयम की सिद्धि का क्या फल है ?

उत्तरः–तज्जयात्प्रज्ञालोकः ॥ यो० द०, ३।५ ॥

संयम की सिद्धि से बुद्धि प्रकाशमय हो जाती है।

तस्य भूमिषु विनियोगः ॥ यो० द०, ३।६ ॥

संयम की सिद्धि से प्रकाशित, प्रकाशमय बुद्धि का विभिन्न भूमियों में (विभूति विषयक) विनियोग

(प्रयोग) करना चाहिए।

संयम के सिद्ध होने पर प्रकाशवती बुद्धि विषय को जानने में समर्थ हो जाती है। समस्त विभूतियों के सम्पन्न होने का आधार योगदर्शन के विभूति पाद के उपरोक्त ४, ५, ६ सूत्र हैं। यदि साधना परायण साधक को आलोकपूर्ण स्थिति नहीं प्राप्त होती है तो उसकी साधना सर्वथा परिणाम शून्य एवम् निरर्थक है। अतः प्राणजय द्वारा सम्पन्न संयम का सिद्धियां सम्पन्नार्थ विभिन्न भूमियों में विनियोग (प्रयोग) करना चाहिए।

६६. प्रश्नः–अन्तरङ्ग तथा बहिरङ्ग साधन कौन कौन से हैं ?

उत्तरः–यम से लेकर प्रत्याहार पर्यन्त सभी साधन बहिरङ्ग हैं। धारणा, ध्यान तथा समाधि इनकी अपेक्षा अन्तरङ्ग साधन हैं परन्तु निर्बीज समाधि सर्वथा अन्तरङ्ग साधन है। निर्बीज समाधि की अपेक्षा से सभी साधन बहिरङ्ग हैं।

६७. प्रश्नः–अन्तरङ्ग तथा बहिरङ्ग साधनों का विवेचनात्मक अन्तर क्या है ?

उत्तरः–साधना के आरम्भ में यम से लेकर प्राणायाम पर्यन्त साधनों द्वारा प्राण जय सहित इन्द्रियों तथा

अन्तःकरण पर अधिकार प्राप्त कर चित्त की एकाग्रता सम्पादित की जाती है। मन धारणा के योग्य हो जाता है। इस अवस्था का नाम प्रत्याहार है। इन्द्रियों तथा अन्तःकरण की शुद्धि व प्राण सहित इन्द्रियों व अन्तःकरण पर अधिकार, विषय होने के कारण, यम से लेकर प्रत्याहार पर्यन्त को बहिरङ्ग साधन माना है।

धारणा ध्यान तथा समाधि का विषय, प्राणजय की गहन अवस्था, चित्त की एकाग्र एवम् निरुद्धावस्था है। अतः पूर्व साधनों की अपेक्षा से यह तीनों धारणा ध्यान तथा समाधि अन्तरङ्ग साधन हैं।

प्राणों पर पूर्ण अधिकार सम्पन्न अवस्था तथा चित्त की निर्विकार एवम् सर्वथा निरुद्ध अवस्था निर्बीज समाधि है। अतः निर्बीज समाधि की अपेक्षा, धारणा ध्यान तथा समाधि बहिरङ्ग साधन हैं। सर्वथा अन्तरङ्ग साधन निर्बीज समाधि है।

६८. प्रश्नः—चित्त के निरोध का क्या परिणाम है ?

उत्तरः—व्युत्थान अवस्था के संस्कारों का दब जाना निरुद्ध अवस्था के संस्कारों का प्रकट हो जाना तथा

निरोध काल में चित्त का निरोध संस्कारानुगत होना निरोध परिणाम है।

संस्कार बल से चित्त की प्रशान्त वाहिता स्थिति होती है।

सब प्रकार के विषयों का चिन्तन करने की वृत्ति का क्षय हो जाना तथा किसी एक ही ध्येय (विषय) को चिन्तन करने वाली "एकाग्र" अवस्था का उदय हो जाना समाधि परिणाम है।

जब शान्त होने वाली और उदय होने वाली दोनों ही वृत्तियां समान सी हो जाती हैं तब वह चित्त का एकाग्रता परिणाम है।

६९. प्रश्नः—योगी को अतीत (भूत) और अनागत (भविष्य) का ज्ञान कैसे होता है ?

उत्तरः—प्राण संयमन पूर्वक ज्योतिष्मती प्रवृत्ति सहित धर्म परिणाम, लक्षण परिणाम, तथा अवस्था परिणाम में संयम करने से योगी को भूत और भविष्य का ज्ञान हो जाता है।

७०. प्रश्नः—योगी को सम्पूर्ण प्राणियों की वाणी का ज्ञान कैसे हो जाता है।

उत्तर—ज्योतिष्मती प्रवृत्ति सहित प्राण संयमन पूर्वक

शब्द अर्थ (लक्ष्य) और प्रत्यय में पृथक् पृथक् सयम करने से सम्पूर्ण प्राणियों की वाणी का ज्ञान हो जाता है।

७१. प्रश्नः-योगी को पूर्व जन्म का ज्ञान कैसे होता है तथा अन्यों के चित्त का ज्ञान कैसे होता है ?

उत्तरः-प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक चित्त में विद्यमान संस्कारों में संयम करने से पूर्व जन्म का ज्ञान होता है।

इस भांति प्राण सयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक दूसरे के चित्त में संयम करने पर परचित्त का ज्ञान हो जाता है।

७२. प्रश्नः-क्या योगी अदृश्य हो सकता है ?

उत्तरः-प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक काया के रूप तथा चक्षुओं की रूप ग्राहणी शक्ति में संयम करने से योगी अदृश्य हो जाता है।

७३. प्रश्नः-क्या योगी अपने अरिष्ट को भी जान सकता है ?

उत्तरः-प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक सोपक्रम तथा निरुपक्रम कर्मों में संयम करने से मृत्यु आदि अरिष्टों का ज्ञान हो जाता है।

प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति

पूर्वक, मैत्री, करुणा और मुदिता में संयम करने से मैत्री, करुणा और मुदिता की प्राप्ति होती है।

७४. प्रश्नः-"बलेषु हस्ति बलादीनि" ॥ यो० द०, ३।२४॥ सूत्र का क्या अभिप्राय है ?

उत्तरः-प्राण की "बल" संज्ञा है। आभ्यन्तर प्राणायाम करते समय प्राण (श्वास) को ग्रासवत् शनैः शनैः रुक रुक कर यथा सामर्थ्य भरते जाना तथा और अधिक न भर सकने पर अत्यन्त मन्दगति से निकाल देना। पुनः पूर्ववत् यही प्रक्रिया १ घटिका पर्यन्त प्रतिदिन प्रातः करनी। इस प्रकार प्रतिदिन अभ्यास करने पर कालान्तर में हाथी के समान बल का प्रादुर्भाव होता है।

७५. प्रश्नः-क्या योगी को छिपे हुए दूर देशस्थ पदार्थों का ज्ञान हो जाता है ?

उत्तरः-प्राणसंयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक संयम करने से योगी को छिपे हुए तथा दूर देशस्थ पदार्थों का ज्ञान हो जाता है तथा अज्ञात अर्थों का भी ज्ञान हो जाता है।

७६. प्रश्नः-योगी को विभिन्न लोकों का ज्ञान कैसे होता है ?

उत्तरः-प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक सूर्य में संयम करने से योगी को विभिन्न

लोकों का ज्ञान हो जाता है।

७७. प्रश्नः–योग दर्शन के विभूतिपाद में दर्शित सिद्धियां क्या हैं और कैसे उत्पन्न होती हैं ?

उत्तरः–योग दर्शन के विभूतिपाद में दर्शित सिद्धियां दो प्रकार की हैं।

अः–काया तथा इन्द्रियादि अन्तःकरण की शुद्धि से उत्पन्न हुई सिद्धियां।

आः–विभिन्न प्रकार के विषयों में संयम करने से उत्पन्न हुई सिद्धियां।

काया, इन्द्रियों तथा अन्तःकरण की विशेष योग्यताएं सिद्धियां हैं।

समस्त सिद्धियां दो प्रकारों से ही सम्पन्न होती हैं।

प्राण संयमन की सिद्धि तथा ज्योतिष्मती प्रवृत्ति के उदय होने पर संयम करने से सिद्धियां उत्पन्न होती हैं।

अः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक चन्द्रमा में संयम करने से नक्षत्रों का ज्ञान हो जाता है।

आः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक

ध्रुव में संयम करने से नक्षत्रों की गति का ज्ञान हो जाता है।

इः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक नाभि में संयम करने से कायव्यूह (शरीर रचना) का ज्ञान हो जाता है।

ईः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक कण्ठ कूप में संयम करने से भूख प्यास निवृत हो जाती है।

उः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक कूर्म-नाड़ी (वक्षस्थल) में संयम करने से चित्त व शरीर स्थिर हो जाता है।

ऊः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक मूर्धा में संयम करने से सिद्ध पुरुषों के दर्शन होते हैं।

एः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक प्रातिभ (भ्रू मध्य) में संयम करने से सर्वज्ञान प्राप्त हो जाता है।

ऐः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती वृत्ति पूर्वक हृदय में संयम करने से चित्त के स्वरूप का ज्ञान हो जाता है।

ओः–बुद्धि और पुरुष दोनों अत्यन्त समीपी होते हुए

भी भिन्न हैं। इनकी पारस्परिक एकता का ज्ञान भोग है। प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति-पूर्वक परार्थ तथा स्वार्थ में संयम करने से पुरुष का ज्ञान होता है।

इसके पश्चात् दिव्य ज्ञान, दिव्य श्रवण, दिव्य स्पर्श, दिव्य दर्शन तथा दिव्य रसास्वादन उत्पन्न होते हैं।

७८. प्रश्नः- क्या सिद्धियां योग में बाधक हैं ?

उत्तरः-सिद्धियों की वास्तविकता को समझने के उपरान्त साधक और बाधक परक मान्यताऐं विलीन हो जाती हैं। समाधिकाल में सिद्धियों परक प्रवृत्ति बाधारूप है। अभ्युत्थान काल में सिद्धियां अभ्युदय परक हैं।

७९. प्रश्नः-क्या योगी परकाया प्रवेश कर सकता है, तथा उसकी विधि क्या है ?

उत्तरः-योगी अपने स्थूल शरीर को छोड़कर, अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा किसी भी अन्य प्राणी के शरीर में प्रवेश कर उससे नाना प्रकार के भोगों को भोग सकता है। इसकी विधि निम्नलिखित है।

विधिः-सर्वप्रथम बाह्य प्राणायाम के प्रबल अभ्यास द्वारा प्राण जय कर, प्राण संयमन द्वारा ज्योतिष्मती

प्रवृत्ति सम्पादित करनी चाहिए। प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति द्वारा संयम करते हुए योगी अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा अभीप्सित शरीर में संकल्प द्वारा प्रवेश कर यथेच्छ भोग भोगता है। त्यक्त स्थूल शरीर से उसका सम्बन्ध एक सीमित समय तक रजत वर्ण सूक्ष्म प्राणों द्वारा बना रहता है। इसी सूक्ष्म प्राण शक्ति के कारण योगी गृहीत शरीर को त्याग कर स्वशरीर में पुनः आ जाता है।

प्राण जयविधिः-१० बाह्य प्राणायाम प्रातःकाल तथा १० बाह्य प्राणायाम सायंकाल प्रथम दिन से आरम्भ कर क्रमशः १०० बाह्य प्राणायाम प्रातःकाल तथा १०० बाह्य प्राणायाम सायंकाल पर्यन्त बढ़ावे।

इस प्रकार प्रतिदिन १०० बाह्य प्राणायाम कर रात्रि के अन्तिम प्रहर में भ्रू मध्य में ध्यान करे। ठीक इसी भांति रात्रि का १ प्रहर बीतने पर १०० बाह्य प्राणायाम कर भ्रू मध्य में ध्यान करे। ध्यान ५ घड़ी अवश्य करे।

इस प्रकार अभ्यास करने पर एक मास में प्राण जय होकर, प्राण संयमन सिद्ध होने पर

ज्योतिष्मती प्रवृत्ति प्राप्त हो जायेगी।

इस विद्या का अभिलाषी दिन में केवल एक बार हल्का भोजन करे।

यह प्राण तथा संयम की उत्कृष्ट साधना है।

८०. प्रश्नः–क्या योगी उदान वायु पर जय प्राप्त कर, जल, पङ्क तथा कण्टकादि के स्पर्श से रहित होकर मृत्यु को स्वैच्छिक बना सकता है?

उत्तरः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक संयम द्वारा उदान पर जय प्राप्त कर योगी, जल, पङ्क तथा कण्टकादि से असङ्ग रह, स्वेच्छापूर्वक मृत्यु की योग्यता प्राप्त कर लेता है।

८१. प्रश्नः–समान जय से क्या लाभ होता है?

उत्तरः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक सयम द्वारा समान जय से शरीर दीप्तिमान् हो जाता है।

८२. प्रश्नः–दिव्य शब्द कैसे सुने जाते हैं?

उत्तरः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक, श्रोत्र तथा आकाश के सम्बन्ध में संयम करने से दिव्य शब्द सुने जाते हैं।

८३. प्रश्नः–क्या योगी आकाश गमन कर सकता है?

उत्तरः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक, काया तथा आकाश के सम्बन्ध में संयम करने से योगी हल्की रुई के समान आकाश में गमन कर सकता है।

८४. प्रश्नः–महाविदेहा स्थिति क्या है तथा इसका क्या फल है?

उत्तरः–शरीर के बाहर अकल्पित रूप से रहने की स्थिति का नाम महाविदेहा है। इससे प्रकाश का आवरण क्षीण हो जाता है।

८५. प्रश्नः–पञ्च महाभूतों के स्थूल स्वरूप, सूक्ष्म स्वरूप तथा अर्थवत्व (उद्देश्य) में संयम करने से क्या होता है?

उत्तरः–प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक पञ्चमहाभूतों के स्थूल स्वरूप, सूक्ष्म स्वरूप, अन्वय (सत, रज तथा तम, तीनों गुणों का प्रकाश, क्रिया और स्थिति रूप स्वभाव) तथा अर्थवत्व (मोक्ष तथा भोग परक उद्देश्य) में संयम करने से पञ्चमहाभूतों पर जय प्राप्त होता है।

पञ्चमहाभूतों पर जय प्राप्त होने से अणिमा, लघिमा, महिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य

ईशित्व तथा वशित्व सिद्धियां, काया सम्पत एवम् भूतों के धर्मों से बाधा न होना सम्पन्न होते हैं।

८६. प्रश्नः—इन्द्रिय जय कैसे होता है ?

उत्तरः—प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्तिपूर्वक इन्द्रियों के पांचों स्वरूप, ग्रहण (विषय ग्रहण करते समय की दशा), स्वरूप (मन द्वारा वैचारिक अवस्था), अस्मिता (ज्ञान स्वरूप बुद्धि एवम् अहंकार) अन्वय, (इन्द्रियों में प्रकाश क्रिया तथा स्थिति रूप सम्बन्ध) तथा अर्थवत्व (भोग तथा अपवगर्थि प्रयोजन) में संयम करने से इन्द्रिय जयत्व प्राप्त होता है।

इन्द्रिय जय से मन के सदृश गति, करणों (इन्द्रियों) के बिना भोग तथा प्रकृति पर अधिकार प्राप्त हो जाता है।

बुद्धि और पुरुष की भिन्नता विषयक ज्ञान मात्र जिसमें विद्यमान है, जिसका सब भावों पर अधिकार है, ऐसा योगी सब कुछ जानने वाला हो जाता है।

उपरोक्त समस्त सिद्धियों में वैराग्य होने, तथा दोषों का बीज क्षीण होने से कैवल्य

(मोक्ष) प्राप्त होता है।

८७. प्रश्नः—क्या सबीज समाधि सम्पन्न होने पर भी अनिष्ट की आशङ्का रहती है।

उत्तरः—स्थान्युपनिमंत्रिणे सङ्गस्मयाकरणं पुनरनिष्ट प्रसङ्गात् ॥ यो० द०, ३।५१ ॥

उत्तम जनों के आमंत्रण से भी बचना चाहिए क्योंकि इससे अभिमान उत्पन्न होने पर पुनः अनिष्ट की आशङ्का रहती है।

८८. प्रश्नः—विवेकज ज्ञान कैसे उत्पन्न होता है ?

उत्तरः—प्राण संयमन सहित ज्योतिष्मती प्रवृत्ति पूर्वक क्षण तथा उसके क्रम में संयम करने से विवेकज ज्ञान उत्पन्न होता है।

जाति लक्षण और देश भेद से जिनमें भेद नहीं किया जा सकता है तथा जो दो वस्तुऐं तुल्य प्रतीत होती हों, उनके अन्तर की प्रतीति विवेकज ज्ञान से होती है।

जिस ज्ञान से कोई विषय अविदित नहीं रहता है, तथा जो भूत भविष्य और वर्तमान की बाधा से रहित एक रस ज्ञान है, वह विवेकज ज्ञान है।

बुद्धि और पुरुष की शुद्धि तथा साम्यावस्था ही मोक्ष है।

× × × ×

८९. प्रश्नः—सिद्धियां कैसे उत्पन्न होती हैं ?

उत्तरः पूर्व जन्मों के प्रारब्ध वशात् जन्म से, औषधि (कल्पादि) के सेवन से, चित्त की एकाग्रता सहित मन्त्र जप से, प्राणायाम आदि शास्त्रानुकूल तप से, तथा समाधि से सिद्धियां उत्पन्न होती हैं।

समाधि से उत्पन्न सिद्धियां अक्षय सामर्थ्य वाली होती हैं। सिद्धियों से सम्पन्न होने पर शरीर, इन्द्रियों तथा चित्त में जो सामर्थ्य संचार होता है, वही जात्यन्तर परिणाम है।

जन्म औषधि, मन्त्र आदि नैमित्तिक कारण विकासगत बाधाओं के हटाने हारे हैं, न कि प्रकृति को बदलने वाले।

जन्म, औषधि, मन्त्र तथा तप आदि साधनों से निर्मित चित्त का कारण अस्मिता है। ध्यान जन्य (समाधि जन्य) चित्त कर्म संस्कारों से रहित शुद्ध होता है।

९०. प्रश्नः—योगियों के कर्म कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तरः—योगियों के कर्म अशुक्ल तथा अकृष्ण (पुण्य तथा

पाप रहित) होते हैं। योगियों से भिन्न जनों के कर्म पुण्य तथा पाप मिश्रित होते हैं।

६१. प्रश्नः–क्या कर्मों में जाति देश और काल से व्यवधान होता है ?

उत्तरः–जाति, देश तथा काल का व्यवधान रहने पर भी स्मृति और संस्कार एक रूप में चित्त में विद्यमान रहते हैं।

६२. प्रश्नः–क्या संस्कार अनादि हैं ?

उत्तरः–वासना रूप होने से संस्कार प्रवाह से अनादि हैं ?

६३. प्रश्नः–वासनाओं के संग्रह का क्या आधार है ?

उत्तरः–हेतु (कारण), फल, आश्रय (चित्त) तथा आलम्बन (विषय) इनसे वासनाओं का संग्रह होता है। इनके अभाव से वासनाओं का अभाव स्वतः ही हो जाता है।

६४. प्रश्नः–क्या अतीत और अनागत धर्म स्वरूप से सदा विद्यमान रहते हैं ?

उत्तरः–धर्म (अविद्या, वासना, चित्त और चित्त की वृत्तियाँ) में अतीत और अनागत रूप काल का भेद होता है। जो धर्म अतीत हो गये हैं और जो धर्म अनागत हैं वे भी स्वरूप से

विद्यमान रहते हैं। वे धर्म व्यक्त स्थिति में गुण रूप ही हैं।

६५. प्रश्नः–क्या परिणाम की एकता से वस्तु (धर्मी) का वैसा सम्भव है ?

उत्तरः–परिणाम की एकता से वस्तु (धर्मी) का वैसा होना सम्भव है।

६६. प्रश्नः–क्या वस्तु साम्य होने पर भी मार्ग पृथक् पृथक् हो सकते हैं ?

उत्तरः–वस्तु साम्य होने पर भी चित्त की पृथकता से मार्ग पृथक् पृथक् हो सकते हैं।

६७. प्रश्नः–वस्तु किसी एक चित्त के अधीन नहीं हैं, अतः जब वह चित्त का चिन्तन रूपी विषय नहीं रहेगी तब उस वस्तु का क्या होगा ?

उत्तरः–उस समय वस्तु के उपराग (चित्त में संस्कार न पड़ने) के कारण वस्तु अज्ञात हो जायेगी। संस्कार पड़ने पर वस्तु पुनः ज्ञात हो जायेगी।

६८. प्रश्नः–क्या चित्त वृत्तियों की भांति पुरुष (चित्त का स्वामी) भी परिणामी है ?

उत्तरः–चेतन होने के कारण पुरुष (चित्त का स्वामी) अपरिणामी है।

९९. प्रश्नः–क्या चित्त प्रकाशमय है ?

उत्तरः–जड़ होने के कारण चित्त प्रकाशमय नहीं है ।

१००. प्रश्नः–क्या एक काल में चित्त और उसका विषय दोनों को जाना जा सकता है ।

उत्तरः–चित्त और उसका विषय दोनों को एक काल में नहीं जाना जा सकता है । चित्त को अन्य चित्त से तथा बुद्धि को अन्य बुद्धि से ग्रहण करने पर अति प्रसङ्ग और स्मृति शङ्कर दोष आ जायेगा । पुरुष के इधर उधर गमन रहित होने से तदाकार अवस्था को प्राप्त होने पर अपनी बुद्धि का ज्ञान होता है ।

दृष्टा और दृश्य में रञ्जित चित्त सब अर्थ वाला हो जाता है ।

१०१. प्रश्नः–क्या अनेक वासनाओं से चित्रित चित्त संस्कारों का अपने लिये संग्रह करता है ।

उत्तरः–असंख्य वासनाओं से चित्रित चित्त जड़ होते हुए भी दृष्टा (पुरुष) के लिये संस्कारों का संग्रह करता है ।

१०२. प्रश्नः–योगी (विवेकी) का चित्त कैसा होता है ?

उत्तरः–योगी (विवेकी) का चित्त, ज्ञान के कारण विनम्र तथा मोक्ष के संस्कारों से युक्त होता है ।

१०३. प्रश्नः–योग सिद्ध पुरुष को समाधि से उपरत होने पर दूसरे पदार्थों का ज्ञान कैसे होता है ?

उत्तरः–समाधि से उपरत होने पर चित्तस्थ पूर्व संस्कारों से योगी को पदार्थों का ज्ञान होता है ।

१०४. प्रश्नः–चित्तस्थ संस्कारों से निवृत्ति कैसे होती है ?

उत्तरः–इन संस्कारों से भी अविद्या अस्मितादि क्लेशों के तुल्य धर्ममेघ समाधि से निवृत्ति हो जाती है ।

१०५. प्रश्नः–धर्ममेघ समाधि कब प्राप्त होती है ?

उत्तरः–जिस योगी का विवेकज ज्ञान की महिमा में भी वैराग्य हो जाता है, उसका विवेकज ज्ञान सर्वथा प्रकाशित रहने के कारण उसको धर्ममेघ समाधि प्राप्त होती है ।

१०६. प्रश्नः–धर्ममेघ समाधि सम्पन्न होने पर ज्ञेय पदार्थ क्यों अल्प हो जाते हैं ?

उत्तरः धर्ममेघ समाधि सम्पन्न होने पर ज्ञान के समस्त आवरण हट जाते हैं, तथा अनन्त (सापेक्षिक) ज्ञान होने के कारण ज्ञेय पदार्थ अत्यल्प हो जाते हैं ।

१०७. प्रश्नः–आविवेक ख्याति द्वारा धर्ममेघ समाधि सम्पन्न

गुणों की क्या स्थिति होती है ?

उत्तर:–अविवेक ख्याति द्वारा धर्ममेघ समाधि सम्पन्न होने पर गुणों के परिणामक्रम की समाप्ति हो जाती है ।

१०८. प्रश्न:–क्रम क्या है ?

उत्तर:–जो क्षणों का प्रतियोगी है और जिसका स्वरूप परिणाम के अन्त में समझ में आता है, वह क्रम है ।

पुरुषार्थ की शून्यता (निश्शेषता तथा गुणों की प्रति प्रसवता (निष्क्रियता) ही कैवल्य है अथवा दृष्टा की स्वरूप में प्रतिष्ठा ही कैवल्य है ।

।। इति श्रीमत्भगवत्पूज्यपाद श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमत् आत्मानन्द तीर्थ स्वामिनः कृतौ "योग विवेक" ग्रन्थः पूर्तिमगात् ।।

× × × ×

प्रतिज्ञायें:-

१. ईश्वर वेद सदाचार, आर्ष साहित्य, आर्य भाषा, आर्य संस्कृति और आर्य परम्पराओं में निष्ठावान हम सब "आर्य राष्ट्र" में दृढ़ निष्ठा रखते हैं।

२. ईश्वरनिष्ठ धर्मात्मा, सदाचारी शूरवीर और न्याय परायण आर्यों का राज्य, सर्वत्र स्थापित करना हमारा पवित्र कर्त्तव्य है। हम इसके लिये हर सम्भव प्रयत्न करेंगे।

(उपरोक्त दोनों प्रतिज्ञाओं को मुद्रित करा, जन प्रचारार्थ वितरित करना प्रत्येक आर्य का पावन कर्त्तव्य है)

× × × ×

भारतीय प्रेस, मेरठ में मुद्रित।

* ओ३म् *

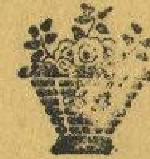
योग विवेक



[योग क्रिया मर्मज्ञः पराविद्या विशेषज्ञः]

श्रीमत्भगवत्पूज्यपाद, श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य

श्रीमत् आत्मानन्द तीर्थ स्वामिना विरचितः



प्रकाशकः-आर्ष योगविद्यापीठ आर्ष योगाश्रम

धर्मसंस्थान खरखौदा, मेरठ, उत्तर प्रदेश

प्रथम संस्करण भेंट पञ्च रुप्यकाणि

२०४१ विक्रमी ५.००

कृपया भेंट देकर ही पुस्तक लें।

• ओ३म् •

भूमिका

योग विषय पर अनेकों ग्रन्थ उपलब्ध हैं परन्तु अधिकांशत: ग्रन्थ योगदर्शन से साम्य नहीं रखते हैं। योग विषयक नव्य ग्रन्थों में अनेकों भ्रान्त विधियां तथा भ्रामक कल्पनाऐं प्रतिपादित की गई हैं। जिनसे साधक का अहित ही होता है।

योग दर्शन पर भी अनेकों टीकाऐं उपलब्ध हैं, परन्तु उनसे साधक अपना व्यवहारिक मार्ग प्रशस्त नहीं कर पाता है।

उपरोक्त सभी दृष्टिकोणों से विचार करने के उपरान्त परम पिता परमात्मा की महती अनुकम्पा तथा योगीजनों की कृपा से योग विषयक व्यवहारिक दृष्टिकोण सन्मुख रखकर योग दर्शन सम्मत "योग विवेक" लिखा है। समस्त साधना परायण ईश्वर उपासकों के उपासना परक मार्ग में "योग विवेक" मार्गदर्शकवत् उपयोगी सिद्ध होगा, यही आशा है। योग विषयक नव्य ग्रन्थों के प्रति पूर्वाग्रह एवम् निष्ठा से सर्वथा रहित व्यक्तियों के लिये ही यह ग्रन्थ उपादेय हो सकेगा।

योग सिद्ध योगी चार प्रकार के होते हैं—

१. प्राथमकल्पिक (अन्तः ज्योति से विषय का साक्षात् करने में समर्थ)
२. मधूभूमिक (ऋतम्भरा प्रज्ञासम्पन्न)
३. प्रज्ञा ज्योतिः (पञ्चभूतजयी एवम् इन्द्रिय जयी)
४. अतिक्रान्तभावनीय (चित्त मात्र को कारण में लय करने में समर्थ)

स्वामी आत्मानन्द तीर्थ

भृगुवार, ज्येष्ठ शुक्ल १० सम्वत् २०४१ विक्रमी,

भृगुवार २५ ज्येष्ठ २०४१ विक्रमी,

ओ३म्

विषयानुक्रमणिका

ओ३म्

१. प्रश्न:-योग क्या है ?

उत्तर:-योग शब्द तीन धातुओं से बनता है, जिनके अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। "युजिर्" योगे अर्थात् जोड़ना।
"युज" समाधौ अर्थात् समाधि।
"युज" संयमने अर्थात् संयम करना, ईश्वर की उपासना करना।

योग दर्शन में प्रयुक्त योग शब्द का अर्थ संयमन अर्थात् उपासना है।

योग के आठ अङ्ग हैं। समाधि योग का आठवां अङ्ग है। संयमन रूपी ईश्वरोपासना के ही, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि आठ अङ्ग हैं। संयम उपासना का नौवां अङ्ग है।

२. प्रश्न:-योग का यथार्थ वर्णन किस ग्रन्थ में है ?

उत्तर:-योग का यथार्थ वर्णन "पतञ्जलि मुनि" कृत "योगदर्शन" में है। योग विषयक अन्य सभी ग्रन्थ भ्रमोत्पादक हैं।

३. प्रश्न:-योगदर्शन शब्द का शाब्दिक अर्थ क्या है ?

उत्तरः—योग शब्द का अर्थ उपासना है । दृग् दर्शने धातु से दर्शन शब्द बनता है, जिसका अर्थ प्रत्यक्ष देखना है । जिस शास्त्र में उपासना द्वारा विषय को प्रत्यक्ष देखने का व्यवहारिक वर्णन है, उस शास्त्र का नाम योग दर्शन है ।

४. प्रश्न :—योग दर्शन में कितने पाद हैं ?

उत्तर :—योग दर्शन में चार पाद अर्थात् चार अध्याय हैं । समग्र योग दर्शन इन चार अध्यायों में व्यवस्थित होने के कारण इन अध्यायों की पाद संज्ञा है ।

५. प्रश्न :—योग दर्शन के चारों पादों के नाम क्या-क्या हैं ? उनके यह नाम किस आधार पर हैं ?

उत्तर :—योग दर्शन में क्रमशः समाधिपाद, साधनपाद, विभूतिपाद तथा कैवल्यपाद नामक चार पादरूपी अध्याय हैं ।

समाधिगत आनन्द की पराकाष्ठा मुक्ति है । तुरीय शरीर द्वारा समाधि अवस्था में, परमेश्वर की उपासना रूपी योगाभ्यास से आनन्द की उपलब्धि होती है । आनन्द ही रस है । रस से ही जीवन सरस होता है । समाधि से ही वास्तविक रूप में जीवन सरस बनता है । अतः

प्रथम पाद समाधि पाद है । समाधि साधन द्वारा सम्पन्न होती है । अतः समाधि पाद के बाद साधन पाद है । साधन पाद का आरम्भ क्रिया-योग रूपी तप स्वाध्याय तथा ईश्वर प्रणिधान से होकर, समाप्ति इन्द्रिय अन्तः करणादि की परम वशीकार अवस्था में होती है । साधन की परा-काष्ठा प्रत्याहार का सम्पन्न होना है ।

साधन पाद के पश्चात् विभूति पाद है । विभूति पाद का आरम्भ धारणा से होकर समाप्ति कैवल्य की परिभाषा में होती है । धारणा, ध्यान, समाधि तथा संयम सभी विभूति पाद में हैं । समस्त सिद्धियां भी विभूति पाद में ही हैं, तथा संयम की अवस्था में उत्पन्न होती हैं ।

विभूति पाद के पश्चात् कैवल्य पाद है । सिद्धियां अथवा विभूतियां, जन्म, औषधि, मन्त्र तप तथा समाधि से उत्पन्न होती हैं, इस विषय से कैवल्य पाद आरम्भ होकर, पुरुषार्थ की पराकाष्ठा, गुणों की प्रतिप्रसवता (निष्क्रियता) तथा द्रष्टा की स्वरूप प्रतिष्ठा में समाप्त होता है ।

योग दर्शन का मूल उद्देश्य द्रष्टा की स्वरूप में प्रतिष्ठा है। इसी हेतु योग दर्शन में चार पादों की क्रमशः व्यवस्था है।

६. प्रश्न :–द्रष्टा कौन है ?

उत्तर :–"तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्" ॥

(यो० द०, १।३)

चित्त की निरुद्धावस्था (समाधि अवस्था) में द्रष्टा अपने स्वरूप में स्थित होता है। यह स्थिति एक देशीय जीवात्मा पर चरितार्थ होती है, सर्वव्यापक एक रस परमात्मा पर नहीं। अतः द्रष्टा जीवात्मा है।

७. प्रश्न:–समाधि कितने प्रकार की है ?

उत्तर :–समाधि दो प्रकार की है। सम्प्रज्ञात तथा असम्प्रज्ञात। समाधि का चित्रमय विवरण निम्न प्रकार है।

समाधि
- सम्प्रज्ञात
  - सविकल्प
    - वितर्कानुगत, विचारानुगत, आनन्दानुगत, अस्मिता
- असम्प्रज्ञात

असम्प्रज्ञात
- निर्विकल्प
  - सबीज,
    - निर्वितर्का, निर्विचारा
  - निर्बीज
    - धर्ममेघ,

८. प्रश्न:–योगी कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर :–योगी दो प्रकार के होते हैं।

१. प्रकृति लय अवस्था को प्राप्त विदेह योगी।

२. साधक कोटि के योगी, जिन्हें योग श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि तथा प्रज्ञा द्वारा सिद्ध होता है।

९. प्रश्न:–संवेग की दृष्टि से सामान्य योगियों में भी क्या विभिन्न श्रेणियां हैं ?

उत्तर :–संवेग की दृष्टि से सामान्य योगियों की तीन श्रेणियां हैं।

१. तीव्र संवेग युक्त, २. मध्य संवेग युक्त,

३. मृदु संवेग युक्त।

१०. प्रश्न:–चित्त की कितनी अवस्थाऐं हैं तथा कौन-कौन से चित्त वाले योगाभ्यास कर सकते हैं ?

उत्तर :-चित्त की पाँच अवस्थाऐं हैं।

१. विक्षिप्त, २. मूढ़, ३. क्षिप्त, ४. एकाग्र तथा ५. निरुद्ध। क्षिप्त, एकाग्र तथा निरुद्ध चित्त वाले योगाभ्यास कर सकते हैं।

११. प्रश्न: चित्त की वृत्तियां कितने प्रकार की हैं ?

उत्तर :-चित्त की वृत्तियां पांच प्रकार की हैं।

१. प्रमाण, २. विपर्यय, ३. विकल्प, ४. निद्रा तथा ५. स्मृति।

१-प्रमाण वृत्ति तीन प्रकार की हैं।

अ-प्रत्यक्ष :-इन्द्रियों तथा अन्तःकरण द्वारा प्राप्त ज्ञान।

आ-अनुमान:-लक्षणों द्वारा अनुमानित ज्ञान।

इ-आगम :-वेद, शास्त्र तथा आप्त पुरुषों द्वारा प्राप्त ज्ञान।

२. विपर्यय :-विपरीत ज्ञान।

३. विकल्प :-पदार्थ रहित, शब्द ज्ञान मात्र।

४. निद्रा :-ज्ञान ग्रहण करने रहित शान्त अवस्था।

५. स्मृति :-अनुभूत विषय की स्मृति परक अवस्था।

१२. प्रश्न: क्या चित्त की उपरोक्त वृत्तियों के भी भेद हैं ?

उत्तर :-उपरोक्त चित्त वृत्तियों के क्लिष्ट (साधना में बाधक) तथा अक्लिष्ट (साधना में सहायक)

नामक दो भेद हैं।

१३. प्रश्न:-योग दर्शन में चित्त की वृत्तियों के निरोध विषयक कितने साधनों का वर्णन है ?

उत्तर :-योग दर्शन के समाधि पाद में चित्त की वृत्तियों के निरोध विषयक निम्नलिखित आठ साधनों का वर्णन है।

१. अभ्यास वैराग्याभ्यां तन्निरोधः॥यो०द०,१।१२॥

चित्त की वृत्तियों का निरोध अभ्यास तथा वैराग्य द्वारा होता है ?

२. ईश्वर प्रणिधानाद्वा ॥ यो० द०, १।२३॥

अथवा ईश्वर प्रणिधान से चित्त की वृत्तियों का निरोध होता है।

३. प्रच्छर्दन विधारणाभ्यां वाप्राणस्य॥यो०द०,१।३४॥

अथवा प्राणवायु (श्वास)को निकालने तथा अन्दर धारण करने (श्वास अन्दर लेने) से चित्त निरुद्ध होता है।

यहां श्वास बाहर निकाल कर बाहर रोकने तथा अन्दरभरकर अन्दर रोकने विषयक वर्णनहै।

४. विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थिति निबन्धनी ॥ यो०द० १।३५॥

अथवा विषय वाली प्रवृत्ति उत्पन्न होकर वह भी मन को बांधने वाली हो जाती है।

५. विशोका वा ज्योतिष्मति ॥ यो० द०, १।३६॥
अथवा शोक रहित ज्योतिष्मति (प्रकाशमयी) प्रवृत्ति भी चित्त को बांधने वाली होती है।

६. वीतराग विषयं वा चित्तम् ॥ यो० द०, १।३७॥
अथवा वीतराग विषय (पुरुष) के आश्रय से चित्त निरुद्ध हो जाता है।

७. स्वप्न निद्रा ज्ञानालम्बनं वा ॥ यो०द०,१।३८॥
अथवा स्वप्न और निद्रा के ज्ञान के आलम्बन से चित्त निरुद्ध हो जाता है।

८. यथाभिमत ध्यानाद्वा ॥ यो० द०, १।३९॥
अथवा अपने अभिमत का ध्यान करने से चित्त निरुद्ध हो जाता है।

१४. प्रश्न:–चित्त की निरुद्धावस्था का आधार कहां तक है ?
उत्तर:–चित्त के परमाणु से लेकर पराकाष्ठा अर्थात् विराट (महतत्व) तक वशीकार के आधार हैं।
इससे परमाणु से महतत्व तक उसके वशवर्त्ती हो जाते हैं।

१५. प्रश्न:–योग दर्शन के मतानुसार ईश्वर का स्वरूप क्या है ?

उत्तर:–क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुष विशेष ईश्वरः ॥ यो०द,०१।२४॥
क्लेश (दु:ख) कर्म, विपाक (कर्मफल) तथा आशय (इच्छा) से असम्बन्धित पुरुष विशेष ईश्वर है।

१६. प्रश्न:–योग दर्शन सम्मत ईश्वर की ज्ञान तथा काल की दृष्टि से क्या विशेषता है तथा ईश्वर का वाचक क्या है एवम् उसकी उपासना का मार्ग क्या है ?
उत्तर:–तत्र निरतिशयं सर्वज्ञ बीजम् ॥ यो०द०,१।२५ ॥
उस ईश्वर में कारण रूप में सर्वज्ञता विद्यमान है।
पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ॥
॥ यो० द०, १।२६ ॥
कालातीत होने के कारण वह ईश्वर पूर्वजों का भी गुरु है।
तस्य वाचकः प्रणवः ॥ यो० द०,१।२७॥
उस ईश्वर का वाचक प्रणव (ओ३म्) है।
तज्जपस्तदर्थ भावनम् ॥ यो० द०, १।२८॥
उस प्रणव (ओ३म्) का जप उसके अर्थ, लक्ष्य रूप परमेश्वर के चिन्तन सहित करना चाहिए।

१७. प्रश्न:–प्रणव के रूप का क्या फल है ?
उत्तर:–ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च ॥
(यो० द०, १।३०)

प्रणव जप से अन्तरायों का अभाव होकर चेतन स्वरूप आत्मा की प्राप्ति हो जाती है ?

१८. प्रश्नः–विघ्न रूप अन्तराय क्या है ?

उत्तरः–व्याधिस्त्यान संशय प्रमादालस्या विरति भ्रांति दर्शनालब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्त विक्षेपास्तेऽन्तरायाः ॥ यो०द०, १।३०॥

व्याधि (शारीरिक रोग) स्त्यान (योगविषयक साधनों में प्रवृत्ति न होना), संशय (परिणाम के प्रति शंका), प्रमाद (योग विषयक साधनों की उपेक्षा), आलस्य (चित्त का भारीपन) अविरति (वैराग्य के अभाव में विषयाशक्ति), भ्रान्ति दर्शन (साधनों में अनास्था), अलब्धभूमिकत्व (साधन करते हुए भी सफलता न मिलना), अनवस्थितत्व (चित्त का किसी भी उपलब्ध भूमि में न ठहरना) ये चित्त के विक्षेपरूपी अन्तराय हैं ।

१९. प्रश्नः–इन अन्तरायों के अतिरिक्त क्या और भी विघ्न है?

उत्तरः–दुःखदौर्मस्याङ्गमेजयत्व श्वास प्रश्वासा विक्षेप सहभुवः ॥ यो० द०, १।३१ ॥

दुःख (आध्यात्मिक अर्थात् शारीरिक दुःख), आधिभौतिक अर्थात् प्राणियों से प्राप्त दुःख तथा आधिदैविक अर्थात् प्राकृतिक सर्दी, गर्मी भूकम्प आदि से प्राप्त दुःख), दौर्मनस्य (इच्छापूर्त्ति के अभाव में उत्पन्न क्षोभ), अङ्गमेजयत्व (अङ्गों का कम्पन), श्वास (प्राण वायु का अन्दर जाना) प्रश्वास (प्राण वायु का बाहर निकलना) यह विक्षेपों (अन्तरायों) के साथ उत्पन्न होते हैं ।

२०. प्रश्नः–उपरोक्त नौ अन्तरायों तथा इनके साथ उत्पन्न होने वाले विक्षेप रूपी विघ्नों को दूर करने के क्या उपाय हैं ?

उत्तर–तत्प्रतिषेधार्थ मेकतत्त्वाभ्यासः॥ यो०द०,१।३२।

इन अन्तरायों तथा विक्षेपरूपी विघ्नों को दूर करने के लिये एक तत्व (ईश्वर प्रणिधानस्वरूप प्रणव जप) का अभ्यास करना चाहिए ।

मैत्री करुणामुदितोपेक्षाणां सुख दुःख पुण्यापुण्य विषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् ॥

(यो० द०, १।३३)

सुखियों के प्रति मैत्री भावना, दुःखियों के प्रति करुणामय भावना, पुण्यात्माओं के प्रति प्रसन्नता तथा पापियों के प्रति उपेक्षा की भावना से अन्तराय एवम् विक्षेप दूर होकर चित्त स्वच्छ हो जाता है।

२१. प्रश्नः–सम्प्रज्ञात तथा सविकल्प समाधि क्या है ?

उत्तरः–क्षीणवृत्तेभि जातस्येव मर्णगृहीतृ ग्रहण ग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता समापत्तिः ॥
(यो० द०, १।४१)

जिसकी (चित्त की)समस्त वाह्य वृत्तियां क्षीण हो चुकी हैं ऐसे स्फटिक मणि के समान निर्मल ग्रहीता, ग्रहण (अन्तःकरण तथा इन्द्रियाँ) तथा ग्राह्य (विषयों) में स्थित हो जाना सम्प्रज्ञात समाधि है।

तत्र शब्दार्थ ज्ञान विकल्पैः संकीर्णा सवितर्का समापत्तिः ॥ यो० द०, १।४२ ॥

उनमें शब्द अर्थ और ज्ञान इन तीनों विकल्पों से मिली हुई सवितर्क समाधि है।

२२. प्रश्नः–निर्वितर्क समाधि क्या है ?

उत्तरः–स्मृति परिशुद्धौ स्वरूप शून्यमेवार्थ मात्र

निर्भासा निर्वितर्का ॥ यो० द०, १.४३॥

स्मृति के शुद्ध हो जाने पर, अपने स्वरूप में शून्यवत् स्थित, ध्येय मात्र को प्रत्यक्ष कराने वाली स्थिति निर्वितर्क समाधि है।

इसी भांति सूक्ष्म विषयों और पदार्थों में की जाने वाली सविचारा और निर्विचारा समाधि हैं।

इनका क्षेत्र सूक्ष्म विषय से लेकर प्रकृति पर्यन्त है।

यह सब सबीज समाधि हैं।

२३. प्रश्नः–निर्विचार (असम्प्रज्ञात) समाधि का क्या फल है ?

उत्तरः–निर्विचार वैशारद्येऽध्यात्मप्रसादः॥यो०द०,१,४७॥

निर्विचार समाधि के वैशारद्य (निरन्तर विद्यमान रहने) से अध्यात्म प्रसाद (आत्मिक सुख) प्राप्त होता है।

ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञाः ॥ यो० द०, १।४८॥

उस समय (असम्प्रज्ञात समाधि अवस्था में) योगी की असम्प्रज्ञात समाधि से समुत्पन्न बुद्धि सुनी

हुई तथा अनुमानित बुद्धि से भिन्न विशेष प्रतिभा वाली होती है।

असम्प्रज्ञात समाधि जन्य संस्कार अन्य संस्कारों का प्रतिबन्धक होता है।

२४. प्रश्नः–निर्बीज समाधि कैसे सम्पन्न होती है ?

उत्तरः–ऋतम्भरा प्रज्ञा जन्य संस्कारों का भी निरोध हो जाने पर निर्बीज समाधि सम्पन्न होती है।

× × × ×

२५. प्रश्नः–क्रिया योग क्या है ?

उत्तरः-तप स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि क्रियायोगः ॥

(योग० द०, २।१)

तप स्वाध्याय तथा ईश्वर प्रणिधान ही क्रिया योग है।

२६. प्रश्नः–क्रिया योग का फल है ?

उत्तरः–समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च ॥

॥ यो० द० २।२ ॥

क्रिया योग, अविद्यादि (अविद्या, अस्मिता, राग द्वेष तथा अभिनिवेश) दोषों को दूर कर समाधि सम्पन्न कराने वाला है।

ये अविद्यादि दोष प्रसुप्त (शान्त), तनू (क्लेश की शक्तिहीन अवस्था), विच्छिन्न (अन्य दोष के प्रभावी होने पर प्रभावी अवस्था) तथा उदार (क्लेश की सक्रिया अवस्था), अवस्थाओं में रहते हैं।

अनित्य को नित्य समझना, अपवित्र को पवित्र समझना, दुःख को सुख समझना, अनात्मा को आत्मा समझना अविद्या है।